ISSN: 2584-0231(Online)
International Journal of Multidisciplinary Research in Arts, Science and Technology
© IJMRAST | Vol. 2 | Issue 10 | October 2024
Available online at: https://ijmrast.com
DOI:https://doi.org/10.61778/ijmrast.v2i10.87

असंगघोष के काव्य में मानवीय अस्मिता की चेतना

रीतेश रावत

शोधार्थी, हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ 226007

Email: reeteshrawat52@gmail.com

शोध सारांश

असंगघोष का जन्म मध्यप्रदेश के जावद नामक छोटे से कस्बे में 29 अक्टूबर 1962 ई0 को हुआ। असंगघोष21वीं शताब्दी के विख्यात हिन्दी कवि है। विषमता और विद्रूपता के प्रति विद्रोह करते हुए सामाजिक समानता के पुरोधा, दलितों के शोषण का विरोध, प्रस्थापित व्यवस्था के विरूद्ध उठायी गई ईमानदार आवाज परिवर्तित समानांतर समाज व्यवस्था खड़ी करने की कोशिश, मानवाधिकार के प्रति सजगता जैसी बहुआयामी चेतना से अनुप्राणित असंग जी की कविताओं में नई शती को विद्रोह की ताकत देने वाला आस्थावान विमर्श प्रस्तुत हुआ है। स्वतंत्रता, समानता, भाईचारा भारतीय संविधान के प्रणीत मूल्य है जो असंगघोष की कविताओं में हमें देखने को मिलता है। स्वयं प्रशासनिक सेवा में रहने के कारण असंग की अनुभूति बढ़ी व्यापक है इसी अनुभूति के कारण ही इनकी कविताओं में व्यवस्था के प्रति अस्वीकृति की गूंज सुनायी देती है।

बीज शब्द– सामाजिक समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व, स्त्री गरिमा, जाति, वर्ग के आधार पर सामाजिक असमानता, विद्रोह, प्रतिरोध आक्रोश, सामाजिक उन्नति, समाज का विकास, शोषण अन्याय, अत्याचार, विद्रूपताएँ, विषमताएँ आदि।

प्रस्तावना

भारतीय संविधान के मूल्य है– स्वतन्त्रता, समता, बंधुता एवं न्याय। संविधान शिल्पी बाबा साहेब द्वारा इन संवैधानिक मूल्यों की प्रतिष्ठा की गई है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16, 17. और 18 में समता के अधिकार का उल्लेख है। भारत विविधताओं का देश है यहाँ बहु संस्कृति और भाषा बोली जाती है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में विश्वास, धर्म, उपासना की स्वतन्त्रता प्रतिष्ठा और अवसर की समता व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली सामाजिक, आर्थिक, और राजनैतिक न्याय का उल्लेख है। इन संवैधानिक मूल्यों को हिन्दी साहित्य के माध्यम से जन–जन तक पहुंचाने का कार्य जिन साहित्यकारों ने कविता के क्षेत्र में किया है उसमें जयप्रकाश कर्दम, सूरजपाल चौहान, ओमप्रकाश वाल्मीकि, असंगघोष, मलखान सिंह, सुशीला टाकभौरे, हेमलता महीश्वर, अनीता भारती, राजतरानी मीनू आदि है।

अम्बेडकरवादी दर्शन

बुद्ध दर्शन और अंबेडकरवाद के आधार पर हिंदी दलित साहित्य की नींव रखी गई। अंबेडकरवादी साहित्य सृजन में सामाजिक आर्थिक सांस्कृतिक एवं जीवन दर्शी मूल्यों का संदर्भ होने के कारण अंबेडकरवादी साहित्य में तार्किकता वैज्ञानिक दृष्टिकोण और चिकित्सक वृत्ति यह विशेषताएं दिखाई पड़ती है इसलिए अंबेडकरवादी साहित्य

सामाजिक आर्थिक सांस्कृतिक और जीवन दर्शन मूल्यों का निर्माण तथा संवर्धन करने वाले साहित्य के स्वरूप के रूप में जाना जाता है। नब्बे के दशक के बाद हिंदी साहित्य में ही नहीं बल्कि प्रत्येक भाषा के साहित्य में दलित और स्त्री साहित्य की अनुगूंज सुनाई देने लगी। साहित्य में यह बदलाव चाहे प्रायोजित हो पर इसने आजाद भारत में दलितों और स्त्रियों के जमीनी संघर्ष को वाणी दी। उनके द्वारा लिखे साहित्य को मुख्यधारा में जगह मिलने लगी पत्र–पत्रिकाओं में संगोष्ठीयों पाठ्यक्रमों में उन्हें स्थान मिलने लगा। भारतीय संविधान और बाबा साहेब के विचार इसकी आधार भूमि बने।

हिंदी दलित साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षर असंगघोष का जन्म 29 अक्टूबर 1962 को पश्चिमी मध्य प्रदेश के कस्बा जावद के एक दलित परिवार में हुआ। अपनी कविताओं से समकालीन हिंदी दलित साहित्य को पूर्णता की ओर अग्रसर करने वाले असंगघोष का अब तक दस काव्य–संकलन प्रकाशित हो चुके हैं, असंग इस समाज से ताल्लुक रखते हैं जिसने सदी दर सदी अपमान, उपेक्षा, दमन शोषण, के तीखे दंष झेले हैं। यह बिरादरी पीढ़ी दर पीढ़ी अमानवीय परिस्थितियों में जीवन जीने को अभिशिप्त रही है। बराबरी की मांग दूर, उसे ना तो खुली हवा में सांस लेने का मौका मिला और ना ही अपनी पीड़ा को व्यक्त करने का।

''भारत में जाति वर्ण लिंग संबंधी भेदभाव का स्रोत और आधार धर्म रहा है। धर्म जो हमारी धमनियों में अलग–अलग रिवाजों और नियमों के रूप में दौड़ रहा है। धर्म की विभिन्न व्यवस्थाएं जो किसी समय विशेष में किसी स्थिति विशेष और स्थान विशेष के लिए बनाई गई, वह संक्रमण के प्रत्येक दौर के बाद समाज के बड़े हिस्से को पद दलित रखने के लिए प्रयोग हुई है।''1

आक्रोशित स्वर

अन्याय प्रेरित समाज व्यवस्था के प्रति जो आग उनके सीने में जल रही थी उसी आग ने साहित्य में आकार प्राप्त कर लिया। लेखक बनने की प्रक्रिया में बहुत से कारक जिम्मेदार रहे, कुल मिलाकर उन्होंने मनुष्य की प्रतिष्ठा, मनुष्य के गौरव, जाति की पीड़ा, वर्ण व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह, सामंत का विद्रोह, समानतावादी समाज की स्थापना, स्वतंत्रता और मुक्ति की आकांक्षाओ को अपनी लेखनी में उतारा।

''हम साहित्य में जिस संवेदना या अनुभव की प्रामाणिकता की बात करते हैं असंगघोष का उससे सीधा वह और गहरा वास्ता रहा है, यह अकारण नहीं है कि कागज पर उनकी कलम की नोक से स्याही नहीं उतरती बल्कि लहू उतरता है। जो अपने आप में बेहिसाब तल्खी समाए हुए विद्रोह की आग में खौलता प्रतीत होता है। असंग की कविताओं में 'लिहाज' के लिए कोई जगह नहीं क्योंकि वह बखूबी जानते हैं कि क्रूर और मगरूर शोषक वर्ग, 'लिहाज' की जुबान नहीं समझता और उसके दर्द 'लिहाज' शालीनता का मानवीय गुण ना होकर दुर्बलता है। निश्चित ही असंग का गुस्सा जायज है और जब वह शोषको को 'हड्डियां चबाने वाला दोपाए जानवर' कहते हैं तो उसी परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए।''2

समकालीन हिंदी दलित साहित्य में असंगघोष एक ऐसी उपस्थिति है जो सर्वाधिक तेवर, साहस और विवेक के साथ धर्म और वर्ण की जकड़बंधियों से जूझते हैं। वे कविता को वहां ले जाते हैं जहां जाने और जिसके बारे में जानने तक का माद्दा बाकी मध्यमवर्गीय कवियों में नहीं है। असंगघोष मूलतः कवि हैं वह अपार साहित्यिक महत्वकांक्षाओ से खुद को बचाए रखते हुए कविता में कबीर की परंपरा को ना सिर्फ विस्तार देते हैं बल्कि उसमें समकालीन यथार्थ को शामिल करते हुए और धारदार बनाने की कोशिश करते हैं। असंगघोष की कविता पाठक को असहज करती है, उसके मानस को झिझोड़कर कर रख देती है, वह उसे विचारोत्तेजित करती है और आपको तीखे आक्रोश से भर देती है और इसी आक्रोश को हम उनके काव्य–संग्रह में 'अब मैं सांस ले रहा हूं' कि कविता 'रक्तबीज' में देख सकते हैं।

''मेरे पास
बंजर जमीन में
बोने के लिए
अपनी वेदनाओं से उपजा आक्रोश है
उसमेंझोंकने के लिए विद्रोह की खाद है
केवल एक बार नहीं
मैं अपना आक्रोश बोऊँगा बार–बार
डालूंगा उसमें बगावत की खाद
उसे अपने खून से सीचूँगा
ताकि इन बीजों से उपजे
रक्तबीज!''3

विद्रोही अभिव्यक्ति

देश में सती–प्रथा, बाल–विवाह, विधवा विवाह प्रतिबंध, छुआछूत, धार्मिक भेदभाव, आदि–आदि रोगों से लोगों को बीमार किया है। कुछ प्रथाओं से मुक्ति तो मिल गई है, लेकिन भारत छुआछूत के रोग से अभी भी मुक्त नहीं हो पाया है इस रोग की दवाई की खोज अभी तक नहीं हो पाई है। असंग जी की कविताओं में एक चेतावनी साफ दिखाई देती है कि यदि अब भी जाति के नाम पर अपमान और घृणा खत्म नहीं हुई तो फिर सवाल का जवाब मांगा जाएगा और इसके लिए किसी भी हद तक जाया जा सकता है।

''तुम्हारी हैवानियत की
पराकाष्ठा के सामने दंडवत हो
तुम्हारी धूर्तता भरी चालो में आकर
मैं कोई समझौता नहीं करूंगा
हरगिज़ नहीं करूंगा कोई समझौता।''4

कवि का ह्रदय वर्जनाओ से मुक्त होकर बगावत करने के लिए व्याकुल है। इसी व्याकुलता में उसके अंतर्मन से निकलते हैं 'नफरतों भरे बगावत के गीत' और इन गीतों को वह खुद पर ही आजमाता है। अपनी लय छंद जिसमें क्षमता और स्वतंत्रता की यह चाह और मनुष्यता की राह है। कवि समाज को यह एहसास कराना चाहता है कि समाज में सब कुछ सुंदर नहीं है बहुत कुछ असुंदर और वीभत्स भी है किंतु इस वीभत्स और असुंदर पर पर्दा है, असंगघोष जी की कविताएं इसी असुंदर और वीभत्स के पर्दे को उखाड़कर समाज के समक्ष अभिव्यक्त करती हैं साथ ही भेड़ की खाल में भेड़िया की पहचान, अभिजातियता के आवरण में छिपे जातिवाद की पहचान, छद्म राष्ट्रवाद और देशभक्ति की पहचान भी करती हैं।

वर्ण और जाति का विरोध

असंगघोष पीड़ित समुदायों के आत्म इतिहास में ऐसे विरल कवि हैं जो कविता का एक नया प्रदेश बनाते हैं, वह एक ऐसा जनपद बनाते हैं जहां उत्पीड़न न्यून हो। उनकी कविता में रैदास के बेगमपुरा की संकल्पना आप सहज ही देख सकते हैं, कविता के भोंथरे पड़े प्रतिमाओं से उनकी कविता का आस्वाद हो सकता है, किसी आलोचक को कम भाय, हो सकता है कोई अलंकारवादी रसवादी, कविता को लेकर अपनी स्थापनाओ से कविता को नकार दें। हो सकता है कविता के नए प्रतिमान में दूसरी परंपरा के कैननो में उनकी कविता को फिट करना कठिन हो, पर उनकी कविताएं इन प्रतिमानों की सीमा रेखा से परे की कविताएं हैं।

वे एक नए सौंदर्यशास्त्र के साथ कविता के इतिहास में पिछले दो दशक से टिके हुए हैं, आज कविता के वही प्रतिमान नहीं है जो कालिदास या बाणभट्ट की कविताओं में हुआ करते थे। कविता के वही कैनन नहीं है जिसमें आसुग

ने बाहुबली रास, नरपति नाल्ह ने बीसलदेव रासो जायसी ने पद्मावत लिखा था। कबीर की कविता के प्रतिमानो को आज हम हूबहू लागू नहीं कर पायेंगे। उनकी उलटबासिया आज के मनुष्य की समझ से बाहर है, आज गुरु और गोविंद में से गुरु और गोविंद किसी एक को नहीं चुनना है, सब अर्थ आधारित तंत्र से हथिया लिया है। आज तो 'मान्यवर कांशीराम' के शब्दों में 'गुरुकिल्ली' की जरूरत है, कविता में उसी 'गुरुकिल्ली' का प्रतिमान स्थापित कर रहे हैं असंगघोष।

हम और हमारा समाज भले ही तीसरी सदी जी रहा हो, पर हम उत्तर आधुनिक होने को लालायित हैं। ऐसा लगता है बाजार की शक्तियां केवल भारत को खा रही हैं और कविता उसके आगे लाचार है। कविता लाचार हो सकती है, अब उत्पीड़ित लाचार नहीं है वंचितों के मुख में आवाज आई है अब उन्हें उनके लिए किसी बोलने वाले की जरूरत नहीं है। वे लिख पढ़ और गा रहे हैं, कविता में गहन पीड़ा को अभिव्यक्त कर रहे हैं। कलावादियों को उन्होंने धकेल दिया है, आस्वाद् को साधारणीकरण तक ले आए हैं। उनके अंदर 'रसराज श्रंगार' नहीं 'जुगुप्सा','भय' और 'क्रोध' अधिक है। आज दलित वंचित निरीह और बेचारा नहीं है, संविधान के कारण उसने अपनी शक्ति को बढ़ाया है उसने अपनी ताकत विकसित की है, आज टीना डाबी जैसी उसकी बेटियां आईएस जैसी कठिन परीक्षा में टॉप कर रही है। दीपा करमाकर जैसी दलित बेटियां भारत का मान बढ़ा रही हैं, आज निक्की जैसी संस्थाओं का वह सफलतापूर्वक संचालन भी कर रहा हैं, आज दलित सामूहिक होकर आवाज उठा रहे हैं जो आज परिवर्तन साहित्य का भी अंग बना है कवि अपनी कविता श्तेरा घोड़ा मेरे कब्जे में हैश, में लिखते हैं–

''मैं एकलव्य नहीं हूं
मेरा अंगूठा अपनी जगह कायम है
ना ही मैं कर्ण हूं
मेरा कवच चिरस्थाई हो चुका है
नहीं आने वाला तेरे झांसे में
तू आ लड़ मुझसे तेरा घोड़ा मेरे कब्जे में है।''5

मानवीय संवेदना

एक दलित लेखक का कई स्तर पर संघर्ष करना पड़ता है उसके सामने अनेक प्रकार की चुनौतियां मुंह बाएं खड़ी रहती हैं, जिससे लड़ते हुए एक और जहां उसे अपना क्षेत्र विस्तार करना है वहीं दूसरी ओर अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता और सार्थकता को पुष्ट करना ही नहीं बल्कि व्याख्यायित और स्थापित भी करना है। जिस कड़ी में कवि सामाजिक व्यवस्था में व्याप्त अनेक विषमताओं जिनके कारण एक मनुष्य को अछूत या दलित करार दिया जाता है लगातार उस पर लिखता है और उतार फेंकना चाहता है ऐसी अपमान भरी चादर को संपूर्ण व्यवस्था से हमेशा–हमेशा के लिए।

''तुम
लदै फंदे हो मेरी पीठ पर
बेताल की मानिंद
बहुत जल्द
तुम्हें
उतार फेकूंगा
किसी गहरी खाई में
हमेशा के लिए।''6

प्रस्तुत कविता प्रश्न खड़ा करती है कि आखिर वह कौन–सी चीजें हैं जिसे कवि उतार फेंकना चाहता है? जाति, धर्म, अपमान, घृणा या फिर व्यवस्था। असंगघोष की कविताओं को पढ़ते हुए हम देखते हैं कि उन्होंने जाति पर कई

कविताएं लिखी है जैसे जाति जात, इज्जत वाली जात, जाति खत्म कर, जात का कीड़ा, जात का भय, चाहता हूं, दंगा आदि, क्योंकि असंगघोष पेशे से प्रशासनिक सेवा में रहे हैं जिससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि योग्यताओं के बावजूद उन्हें जाति का जो जहरीला दंश वह झेलना ही पड़ा होगा। असंगघोष की कवि कविता जहां एक और दलित समुदाय की पीड़ा, वेदना और दुख–दर्द को व्यक्त करती है वहीं दूसरी ओर धर्म और जाति की आड़ में खत्म होती इंसानियत को भी लक्षित करती है। जैसा कि श्रमजीवी के रोजी–रोटी के औजारों का अपनी सुरक्षा में शस्त्र का रूप धारण कर लेना एक दर्दनाक प्रक्रिया है, जिस का चित्रण हम असंगघोष की कविता 'दंगा' में देख सकते हैं उसी प्रकार मनुष्य के अंदर संवेदना का खत्म हो जाना एक भयावह स्थिति है।

''आदमी को
काटता है
जब आदमी
तब
लहू नहीं
हैवानियत बहती है
जात का नकाब ओढ़े
धर्म अट्टाहस करता है
और
इंसानियत
बेमौत मारी जाती है।''7

सामाजिक समानता

असंगघोष की कविता स्वानुभूत दुख सुख, हानि–लाभ, करुणा, आक्रोश एवं मानसिक गुलामी से छूटने की छटपटाहट को वाणी देने की कोशिश है। या उत्पीड़न जबरन मूक–बधिर बनाकर स्थापित एकतरफा शांति के विरुद्ध भीषण कोलाहल और संघर्ष का शंखनाद है। जाहिर है कि ऐसी कविता से पारंपरिक रूढ़ मान्यताओं को चुनौती मिलेगी और सदियों तक स्थापित मिथक टूटेंगे। बावजूद इसके कवि संयम का दामन नहीं छोड़ता वह तमाम व्याप्त विडंबनाओ को समाप्त करना चाहता है, ऐसा नहीं है कि उनका स्थान लेकर स्वयं शोषक बन जाना चाहता है। उनकी मान्यता है कि जो श्रमिक निम्न वर्ग दलित वर्ग पीड़ित वर्ग है उसके कार्य को भी उतना ही महत्व मिलना चाहिए जितना उच्च वर्गों को। मूलतः वह समानता के अधिकार के पक्ष में खड़ा है, वह बदले की भावना का पोषक नहीं है। कवि का मानना है कि समाज में सभी मनुष्यों को अपनी अपनी विशेषता या सार्थकता है। किसी एक का भी न होना बड़ी क्षति का कारण हो सकता है इसीलिए सब का उचित और समान सम्मान होना जरूरी है संतुलन बनाए रखने के लिए। सब के पास अपने अपने रंग हैं जीवन के कैनवास को भरने के लिए।

''तेरे पास रंग हैं
कूंची है
कैनवास है
मेरे पास
नीला आकाश है
और
मेरी संवेदनाओं के रंग हैं
मैं इनसे
इस नीलांबर में अपने रंग भरूँगा।''8

असंग एक सामाजिक प्रतिबद्ध रचनाकार है। समाज से उन्हें जो मिला शोषण, उत्पीड़न, वंचना इत्यादि वह उसे समाज को वापस तो करते हैं परन्तु हिंसा का जवाब हिंसा से नहीं देते हैं। वह संवैधानिक मूल्यों के पक्षधर है, उनका शोषण का हिसाब संविधान तय करेगा। संघर्ष के आदी हो चुके वह समाज को आगाह करते हैं कि बहुत जल्द परिवर्तन की बयार बहेगी जिसमें तेरा दंभ और अहंकार टूटेगा क्योंकि–

"और मैं हूँ
कि लगातार करवट ले रहा हूँ
और सुन रहा हूँ
स्वतंत्रता की पदचापें
इसीलिए बोल रहा हूँ
सदियों के मौन को
तोड़ रहा हूँ और
गढ़ रहा हूँ
अपनी एक आकृति
सचमुच मैं करवट ले रहा हूँ।''9

समय के साथ बदलाव हर समाज में आता है। भारतीय समाज भी इसमें अछूता नहीं रहा, जो कभी मूक बधिर थे वह आज अपनी यातना को लिपिबद्ध कर रहे हैं। समय ही उसका जवाब देगा परन्तु जो प्रताड़ना के फूल दलितों के अंगों में खिले थे अब वह कांटों का रूप ले चुके जो शीघ्र ही शोषणकर्त्ता के आँखों में चुभेंगे। असंगघोष और उनकी कविताओं के विषय में **जयप्रकाश कर्दम** लिखते हैं– "चेतन व्यक्ति केवल प्रतिकार नहीं करता, वह प्रश्न भी करता है। प्रश्नानुकूलता चेतनता की प्रतीक है। कवि असंगघोष चेतन कवि हैं, उनके अन्दर प्रश्नों का एक सैलाब–सा है, जो निरन्तर उन्हें मथता है, विचलित करता है। प्रश्नाकुल मस्तिष्क की उद्‌भूति ये कविताएँ बेचैन करने वाली कविताएँ हैं।"10

''असंगघोष की कविताएं जहां एक और साहित्यिक प्रतिरोध का स्वर है, वहीं दूसरी ओर साहित्यिक प्रतिरोध का स्वर है भारतीय समाज में व्याप्त दो संस्कृतियों के वजूद की लड़ाई है। इस प्रतिरोध में छदमपूर्ण धर्मांधता और राजनीतिक षड्यंत्र के प्रति विद्रोह का स्वर है।

'उमाशंकर सिंह के शब्दों में'–

''असंग एक प्रतिबद्ध अंबेडकरवादी लेखक हैं, लोकधर्मी है। इनकी वैचारिकी निर्मिती में 'ज्योतिबा फुले' का आक्रोश और अंबेडकर की तर्तिकता दोनों सन्निहित है। मार्क्सवादी वर्गीय नजरिया उन्हें सामाजिक जातीय संरचना के खिलाफ विद्रोही भाषा देता है।''11

किसी लेखक को एक विशेष दायरे में बांध देने से उसका संपूर्ण विश्लेषण संभव नहीं हो पाता, उसी प्रकार असंगघोष का भी कविता– संसार बेहद विस्तृत होने के बावजूद उन्हें सिर्फ दलित कवी के रूप में स्वीकार करना अन्याय होगा। एक कवि सर्वप्रथम कवि होता है बाद में अपनी कविता की प्रवृत्तियों के आधार पर उसे एक विशेष ढांचे में बांध दिया जाता है, किंतु इससे उसके लेखन का दायरा और कभी मन संकुचित नहीं होता बल्कि निरंतर विकसित ही होता है। असंगघोष का भी यदि आरंभ से अब तक विश्लेषण करें तो हम पाते हैं कि कवि ने अलग–अलग समय पर अनेक पहलुओं पर अपनी लेखनी चलाई है वह कहीं एक जगह ठहरता नहीं है।

निष्कर्षतः

कहा जा सकता है कि हम यह कह सकते है असंगघोष की कविताओं में भुक्तभोगी होने की वजह से सामाजिक समानता के प्रति क्रान्ति के स्वर सुनायी देते हैं। असंगघोष का वैचारिक पक्ष एवं विचार दर्शन बुद्ध की शिक्षा एवं फुले

और बाबा साहेब का संघर्ष है। जातिभेद की जटिल संरचना का असंग ने कड़ा विरोध किया है और शोषण के प्रतीक एवं सामाजिक भेदभाव बढ़ाने वाले परम्परागत मिथको को अपनी कविताओं के माध्यम से चुनौती दी है। असंगघोष की कविताओं में शोषितों को उनके सामाजिक अधिकारों के प्रति सचेत करके उन्हें शोषण की व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह की ताकत देती है। स्त्री सम्मान के प्रति सचेत असंगघोष नारी यौन शोषण का चित्रण करते हुए यह कहते है कि स्त्री उपयोग की कोई वस्तु नहीं है। स्त्री अस्मिता और उसकी गरिमा का पक्ष असंगघोष बड़े कड़े स्वर में करते है। असंगघोष की कविताओं में मानवीय संवेदनाओं के रंग है और वह रंग नीला है उसी नीले रंग के नीचे असंग सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक समानता को समृद्ध एवं पुष्ट करना चाहते है। मानवता के प्रबल पक्षधर असंगघोष हिन्दी कविता के सशक्त हस्ताक्षर है।

सन्दर्भ

[1]. सहाय, संजय, हंस, वर्ष–34, अंक–5 दिसम्बर 2019, पृ0 54

[2]. सक्सेना, सुधीर, तुम देखना काल, संस्करण–2019, लोकमित्र प्रकाशन, दिल्ली–110032, पृ0 9

[3]. असंगघोष, अब मैं साँस ले रहा हूँ, संस्करण–2018, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–110002, पृ0 47

[4]. असंगघोष, बंजर धरती के बीज, संस्करण–2019, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ–110031, पृ0 93

[5]. असंगघोष, हम ही हटायेंगे कोहरा, संस्करण–2018, सान्निध्य बुक्स, दिल्ली–110031, पृ0 30

[6]. असंगघोष, समय को इतिहास लिखने दो, संस्करण–2015, शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली–110032, पृ0 77

[7]. असंगघोष, हम गवाही देंगे, संस्करण–2010, शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली–110032, पृ0 47

[8]. असंगघोष, अब मैं साँस ले रहा हूँ, संस्करण–2018, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 39

[9]. असंगघोष, बंजर धरती के बीज, संस्करण–2019, रश्मि प्रकाशन, लखनऊ–226023, पृ0 25

[10]. कर्दम, जयप्रकाश, दलित कविता : समकालीन परिदृश्य, संस्करण–2018, अमन प्रकाशन, कानपुर–208012, पृ0 66

[11]. उमाशंकर की फेसबुक वॉल से।

Cite this Article

रीतेश रावत, असंगघोष के काव्य में मानवीय अस्मिता की चेतना, *International Journal of Multidisciplinary Research in Arts, Science and Technology (IJMRAST), ISSN: 2584-0231, Volume 2, Issue 10, pp. 27-33, October 2024.*

Journal URL: *https://ijmrast.com/*

DOI: *https://doi.org/10.61778/ijmrast.v2i10.87*

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License.